इकाई 11 न्याय एवं वैशेषिक दर्शन का परिचय

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 न्याय दर्शन का इतिहास- प्राचीन एवं नव्य न्याय

11.3 न्याय दर्शन की विषयवस्तु

- 11.3.1 प्रमाण
- 11.3.2 प्रमेय
- 11.3.3 संशय
- 11.3.4 प्रयोजन
- 11.3.5 दृष्टान्त
- 11.3.6 सिद्धान्त
- 11.3.7 अवयव
- 11.3.8 तर्क
- 11.3.9 निर्णय
- 11.3.10 वाद
- 11.3.11 जल्प
- 11.3.12 वितण्डा
- 11.3.13 हेत्वाभास
- 11.3.14 छल
- 11.3.15 जाति
- 11.3.16 निग्रह-स्थान

11.4 वैशेषिक दर्शन का इतिहास

11.5 वैशेषिक दर्शन की विषयवस्तु

- 11.5.1 द्रव्य
- 11.5.2 गुण
- 11.5.3 कर्म
- 11.5.4 सामान्य
- 11.5.5 विशेष
- 11.5.6 समवाय
- 11.5.7 अभाव

11.6 सारांश

11.7 शब्दावली

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

11.8 उपयोगी पुस्तकें

11.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप-

- न्याय दर्शन के इतिहास - प्राचीन न्याय एवं नव्य न्याय के बारें में जान सकेंगे।
- न्याय दर्शन की विषयवस्तु से परिचित हो सकेंगे।
- वैशेषिक दर्शन के इतिहास के बारें में जान सकेंगे।
- वैशेषिक दर्शन की विषयवस्तु से अवगत हो पायेंगे।
- प्रयुक्त तकनीकी शब्दावली का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

न्याय दर्शन का विषय 'न्याय' का विवेचन तथा प्रतिपादन है। न्याय का व्यापक अर्थ है- विभिन्न प्रमाणों की सहायता से वस्तुतत्त्व की परीक्षा करना **"प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः"** (वात्स्यायनकृत न्यायभाष्य 1/1/1) । प्रमाणों के स्वरूप का वर्णन करने से यह दर्शन न्यायदर्शन के नाम से पुकारा जाता है। इसके अतिरिक्त वैशेषिक दर्शन के प्रधान सिद्धान्त न्याय दर्शन के समान ही हैं अतः इन दोनों दर्शनों को समानतन्त्री कहा जाता है। न्याय का प्रधान लक्ष्य अन्तर्जगत् तथा ज्ञान की मीमांसा करना है तथा वैशेषिक का मुख्य लक्ष्य बाह्य जगत की विस्तृत समीक्षा प्रस्तुत करना है। इस इकाई 11 **'न्याय एवं वैशेषिक दर्शन का परिचय'** के अन्तर्गत न्याय दर्शन के इतिहास-प्राचीन न्याय एवं नव्यन्याय तथा उसकी विषयवस्तु-प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रह-स्थान का वर्णन किया जाएगा तथा इसके अतिरिक्त वैशेषिक दर्शन के इतिहास एवं उसकी विषयवस्तु-द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय एवं अभाव का सामान्य रूप से विवेचन किया जाएगा । वैशेषिक दर्शन के सप्तपदार्थवाद के विषय में अगली इकाई में विस्तृत विवेचन किया जाएगा ।

11.2 न्याय दर्शन का इतिहास- प्राचीन एवं नव्य न्याय

दर्शन के क्षेत्र में न्याय का व्यापक अर्थ भिन्न-भिन्न प्रमाणों के द्वारा वस्तुतत्त्व की परीक्षा करना है। न्याय दर्शन का एक और नाम 'आन्वीक्षिकी' भी है। न्याय को तर्कशास्त्र अथवा प्रमाणशास्त्र भी कहा जाता है क्योंकि इस दर्शन का मुख्य उद्देश्य प्रमाणों का ऐसा निरूपण करना है जिसकी सहायता से वस्तु के स्वरूप का निर्णय किया जा सके ।

गौतम/अक्षपाद मुनि के द्वारा रचित न्यायसूत्र को इस दर्शन का प्रथम ग्रन्थ माना जाता है। परवर्ती युग 12वीं शती ईस्वी में गंगेश उपाध्याय ने गौतम के **'प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणानि** सूत्र पर **'तत्त्वचिन्तामणि'** नामक ग्रन्थ लिखा जो नव्य-न्याय का प्रतिपादक ग्रन्थ है । इस प्रकार न्यायदर्शन के दो भेद हो गए- प्राचीन न्याय, नव्य न्याय । प्राचीन न्याय प्रमेय प्रधान रहा जबकि नव्य-न्याय प्रमाण प्रधान रहा।

1. **प्राचीन न्याय-** गौतम (ईसा पूर्व तृतीय शती) रचित **'न्यायसूत्र'** प्राचीन न्याय का प्रामाणिक ग्रन्थ है। इसमें पदार्थों के निरूपण और मुक्ति पर विचार किया गया है। वात्स्यायन ने इन सूत्रों पर **'न्यायभाष्य'** नामक ग्रन्थ लिखकर गौतम के सूत्रों की व्याख्या की। उद्योतकर ने न्यायभाष्य पर **'न्यायवार्तिक'** की रचना की। जयन्तभट्ट रचित **'न्यायमंजरी'** में न्याय के सिद्धान्तों का प्रौढ़ प्रतिपादन हुआ। प्रसिद्ध दार्शनिक वाचस्पति मिश्र ने उद्योतकर के ग्रन्थ की विस्तृत व्याख्या रूप में '**न्यायवार्तिक तात्पर्यटीका'** नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया। उदयनाचार्य ने **'न्यायकुसुमाञ्जलि'** नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना के साथ-साथ वाचस्पति मिश्र के ग्रन्थ पर '**न्यायवार्तिक तात्पर्यटीका परिशुद्धि'** नामक टीका भी लिखी। भार्सवज्ञ का **'न्यायसार'** भी प्राचीन न्याय का प्रसिद्ध ग्रन्थ है।

2. **नव्यन्याय-** मिथिला निवासी गंगेश उपाध्याय ने **'तत्त्वचिन्तामणि'** नामक ग्रन्थ लिखकर 'नव्यन्याय' की धारा प्रवाहित की। नव्यन्याय में तर्क को प्रधानता दिए जाने से यह पदार्थ निरूपण की अपेक्षा प्रमाणशास्त्र पर बल देता है। मिथिला और नवद्वीप बंगाल नव्यन्याय के प्रधान गढ़ रहे। गंगेश उपाध्याय के ग्रन्थ पर गंगेश के पुत्र वर्धमान ने **'प्रकाश'** नामक टीका लिखी तथा 'तत्त्वचिन्तामणि' पर रघुनाथ शिरोमणि ने **'दीधिति'** एवं मथुरानाथ तर्कवागीश ने **'रहस्य'** नामक टीकाओं का प्रणयन करके नव्यन्याय को सुदृढ़ किया। 'दीधिति' टीका पर जगदीश भट्टाचार्य की **'जगदीशी'** और गदाधर भट्टाचार्य की **'गदाधरी'** टीकाएँ मौलिक ग्रन्थ के रूप में समादृत हुई हैं।

   13वीं शताब्दी में मिथिला के प्रसिद्ध नैयायिक केशव मिश्र ने 'तर्कभाषा' नामक प्रकरणग्रन्थ की रचना की जिसे न्यायदर्शन में प्रवेश का द्वार माना जाता है।

11.3 न्याय दर्शन की विषयवस्तु

न्यायदर्शन का लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति है। इसके लिए संपूर्ण जगत् के सभी पदार्थों का सम्यक् ज्ञान आवश्यक है। न्यायदर्शन ने सम्पूर्ण विश्व को सोलह पदार्थों में परिभाषित किया है। वे पदार्थ निम्नलिखित हैं-**'प्रमाणप्रमेयसंशयप्रयोजनदृष्टान्त सिद्धान्तावयवतर्क निर्णयवादजल्पवितण्डा हेत्वाभासच्छल जातिनिग्रहस्थानानां तत्वज्ञानान्निःश्रेयसाधिगमः।**' अर्थात् प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रह-स्थान। इन्हीं पदार्थों के सम्यक् ज्ञान से निःश्रेयस की प्राप्ति होती है। आइए अब हम इनके विषय में अध्ययन करते हैं।

11.3.1 प्रमाण

जिस साधन से यथार्थ ज्ञान 'प्रमा' की प्राप्ति हो, उसे प्रमाण कहते हैं। प्रमेय की सिद्धि प्रमाण के अधीन होती है **'मानाधीना मेयसिद्धिः'** । प्रमाण पर अत्यधिक जोर देने के कारण ही न्यायदर्शन कभी-कभी प्रमाणशास्त्र भी कहा जाता है। न्यायदर्शन के प्रवर्तक गौतम ने चार प्रमाणों को स्वीकार किया है- **'प्रत्यक्षानुमानोपमानशब्दाः प्रमाणानि'** अर्थात् प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द।

11.3.2 प्रमेय

प्रमाण के द्वारा जिस विषय का ज्ञान हो उसे प्रमेय कहते हैं। दूसरे शब्दों में यथार्थ ज्ञान का विषय ही प्रमेय है। न्यायसूत्र में बारह प्रकार के प्रमेय बताए गए हैं- **'आत्मशरीरेन्द्रियार्थबुद्धिमनःप्रवृत्तिदोषप्रेत्यभावफलदुःखापवर्गास्तु प्रमेयम्'** (न्यायशास्त्र, 1/1/9) अर्थात् आत्मा, शरीर, इन्द्रिय, अर्थ, बुद्धि, मन, प्रवृत्ति, दोष, प्रेत्यभाव, फल, दुःख और अपवर्ग ।

11.3.3 संशय

'एकस्मिन् धर्मिर्णी विरुद्धनानार्थावमर्शः संशयः' अर्थात् एक धर्मी में परस्पर विरुद्ध अनेक धर्मों का परिज्ञान 'संशय' कहलाता है। कहने का आशय यह है कि जब किसी एक ही वस्तु के विषय में कई विरोधी विकल्प उठ खड़े हों और यह पता न चले कि इनमें से कौनसा विकल्प सही है, तो इसे संशय कहते हैं। दूसरे शब्दों में मन की अनिश्चित अवस्था ही संशय है। जैसे - दूर खड़े किसी व्यक्ति को देखकर यदि यह सोचना पड़े कि वह या तो उसका मित्र राम है या कोई अन्य है, तो यह संशय की स्थिति है।

11.3.4 प्रयोजन

'येन प्रयुक्तः प्रवर्तते तत् प्रयोजनम्' अर्थात् जिससे प्रयुक्त होकर मनुष्य किसी कार्य में प्रवृत्त होता है, उसे 'प्रयोजन' कहते हैं। जिस लक्ष्य के लिए कोई कार्य किया जाए, उसे ही प्रयोजन कहा जाता है। प्रयोजन के दो प्रकार हैं-भावात्मक और निषेधात्मक। भावात्मक प्रयोजन उसे कहते हैं, जिसकी प्राप्ति के लिए कार्य किया जाए। उदाहरण- धन की प्राप्ति के लिए व्यापार में प्रवृत्त होना। निषेधात्मक प्रयोजन; किसी अनिष्ट से छुटकारा पाने के लिए कार्य में प्रवृत्त होना। न्याय दर्शन के अनुसार मानव जीवन का चरम प्रयोजन मोक्ष की प्राप्ति है।

11.3.5 दृष्टान्त

'वादिप्रतिवादिनोः संप्रतिपत्तिविषयोऽर्थो दृष्टान्तः' अर्थात् जिस अर्थ में वादी और प्रतिवादी की समान प्रतिपत्ति हो अर्थात् जो अर्थ दोनों को समान रूप से मान्य हो; वह अर्थ दृष्टान्त है। कहने का आशय यह है कि जिसे देखकर किसी बात का निर्णय कर लिया जाए, उसे दृष्टान्त कहते हैं। जब वादी और प्रतिवादी वाद-विवाद में उलझ जाते हैं, तब किसी दृष्टान्त द्वारा ही वे किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं। दृष्टान्त ऐसा होना चाहिए जिसे दोनों ही पक्ष; वादी और प्रतिवादी स्वीकार करें। उदाहरण- धुएँ और आग के बीच व्याप्ति संबंध स्थापित करने के लिए चूल्हे का दृष्टांत देते हैं क्योंकि चूल्हे के संबंध में तो यह सभी मानते हैं कि वहाँ धुआँ भी है और आग भी है ।

11.3.6 सिद्धान्त

'प्रामाणिकत्वेनाभ्युपगतोऽर्थः सिद्धान्तः' अर्थात् जो अर्थ प्रामाणिक रूप से स्वीकृत होता है उसे 'सिद्धान्त' कहा जाता है। कहने का आशय यह है कि पूर्वस्थापित निर्णय को ही

सिद्धान्त कहा जाता है। प्रमाण द्वारा अंतिम रूप से सिद्ध या प्रमाणित विषय ही सिद्धान्त कहा जा सकता है। वह चार प्रकार का है – सर्वतन्त्र, प्रतितन्त्र, अधिकरण एवं अभ्युपगम सिद्धान्त ।

11.3.7 अवयव

'अनुमानवाक्यस्यैकदेशा अवयवाः' अर्थात् अनुमान वाक्य का एक देश 'अवयव' है। कहने का आशय यह है कि तर्क या अनुमान से ही ज्ञान की प्राप्ति होती है। इसके लिए तर्क या अनुमान के अवयवों का ज्ञान आवश्यक है। पंचावयव न्याय में पाँच अवयव - प्रतिज्ञा, हेतु, उदाहरण, उपनय और निगमन होते हैं।

11.3.8 तर्क

'तर्कोऽनिष्टप्रसङ्गः' अर्थात् अनिष्ट प्रसंग का नाम 'तर्क' है। कहने का आशय यह है कि व्याप्य के आधार पर व्यापक को प्रमाणित करना ही तर्क है। जैसे किसी स्थान पर धुँए (व्याप्य) को पाकर वहाँ अग्नि (व्यापक) की उपस्थिति को सिद्ध करना ही तर्क है।

11.3.9 निर्णय

'निर्णयोऽवधारणज्ञानम्' अर्थात् किसी वस्तु के निश्चयात्मक ज्ञान को 'निर्णय' कहते हैं। कहने का आशय यह है कि किसी विषय के संबंध में भ्रम या संशय उत्पन्न होने पर हम विषय के पक्ष और विपक्ष में दिए गए तर्कों पर विचार करने के बाद जिस निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, उसे ही निर्णय कहते हैं। उदाहरण - अंधेरे में पड़ी किसी वस्तु को देखकर जब यह संशय हो कि वह साँप है या छड़ी है, तब रोशनी में उसे साँप जानकर हम जिस निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, वही निर्णय है।

11.3.10 वाद

'तत्त्वबुभुत्सोः कथा वादः' अर्थात् तत्त्वज्ञान की जिज्ञासा से किसी विषय पर जो चर्चा की जाती है उसका नाम 'वाद' है। इस प्रकार वाद एक प्रकार का विचार-विमर्श है जिसका लक्ष्य सत्य की परीक्षा एवं प्राप्ति है। यह वाद-विवाद का आदर्श रूप है। इसमें पक्ष-विपक्ष के सभी पक्षों का ध्यान रखते हुए किसी निश्चित निर्णय पर पहुँचा जाता है। यहाँ वाद-विवाद या शास्त्रार्थ सही एवं तार्किक ढंग से होता है।

11.3.11 जल्प

'उभयसाधनवती विजिगीषुकथा जल्पः' अर्थात् पक्ष-प्रतिपक्ष दोनों पक्षों के साधन से युक्त विजय की कामना से वादी-प्रतिवादियों की कथा 'जल्प' है। कहने का आशय यह है कि जहाँ केवल जीत के लिए वाद-विवाद किया जाए, उसे जल्प कहते हैं। यहाँ शास्त्रार्थ सत्यप्राप्ति के लिए नहीं होता। प्रत्येक पक्ष किसी न किसी प्रकार अपनी विजय प्राप्त करना चाहता है। इसके लिए वह युक्तियों के साथ-साथ छल-छद्म आदि कुतर्कों का प्रयोग करता है। यहाँ उचित एवं अनुचित किसी भी साधन से जीतने की चेष्टा की जाती है।

11.3.12 वितण्डा

'स एव स्वपक्षस्थापनाहीनो वितण्डा' अर्थात् जिस कथा में अपने पक्ष की स्थापना न कर केवल परपक्ष का खण्डन ही किया जाता है, उस कथा का नाम वितण्डा है। कहने का आशय यह है कि जब जल्प करने वाला अपने पक्ष को प्रमाणित करना छोड़कर विपक्ष का खण्डन करना ही अपना मुख्य लक्ष्य बनाकर वाद-विवाद में भाग लेता है, तब इसे ही वितण्डा कहते हैं। 'वाद' उच्चकोटि का शास्त्रार्थ है और 'जल्प' तथा वितण्डा निम्न कोटि के वाद-विवाद के रूप हैं।

11.3.13 हेत्वाभास

हेत्वाभास का शाब्दिक अर्थ है - हेतु का आभास अर्थात् अवास्तविक हेतु का वास्तविक हेतु जैसा दिखाई देना। इसके पाँच प्रकार हैं – असिद्ध, विरुद्ध, अनैकान्तिक, प्रकरणसम तथा कालात्ययापदिष्ट । सामान्यतः अनुमान के दोषों को हेत्वाभास कहते हैं ।

11.3.14 छल

'अभिप्रायान्तरेण प्रयुक्तस्य शब्दस्यार्थान्तरं परिकल्प्य दूषणाभिधानं छलम्' अर्थात् एक अर्थ के तात्पर्य से प्रयुक्त किये गये शब्द का किसी दूसरे अर्थ की कल्पना कर किये जाने वाले दोष कथन को 'छल' कहा जाता है। कहने का आशय यह है कि वादी के कथन का अर्थ बदलकर उसे परास्त करने का प्रयत्न करना ही छल है। एक शब्द के अनेक अर्थ होते हैं। वक्ता के शब्दों का अपने मन के अनुसार अर्थ लगा देने से वक्ता पराजित हो जाता है। यही छल है।

11.3.15 जाति

'असदुत्तरं जातिः' अर्थात् असत् उत्तर को 'जाति' कहा जाता है। कहने का आशय यह है कि जाति को यहाँ एक विशेष अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। असंगत उपमान के प्रयोग द्वारा अपनी बात सिद्ध करना ही जाति है। यहाँ व्याप्तिसंबंध के अभाव में केवल समानता और असमानता के आधार पर कोई दोष दिखाया जाता है।

11.3.16 निग्रह-स्थान

'पराजयहेतुः निग्रहस्थानम्' अर्थात् निग्रह स्थान का अर्थ पराजय की स्थिति है। कहने का आशय यह है कि शास्त्रार्थ में शत्रु को पराजित सिद्ध कराने का हेतु निग्रहस्थान कहलाता है। न्याय सूत्र के अनुसार यह बाईस प्रकार का होता है।

11.4 वैशेषिक दर्शन का इतिहास

वेद की प्रामाणिकता को स्वीकार करने के कारण वैशेषिक दर्शन आस्तिक दर्शन है। इस दर्शन के प्रवर्तक का नाम है कणाद । 'कणान् अत्तीति कणादः' इस व्युत्पत्ति के अनुसार विद्वानों का कथन है कि वे इतने बड़े सन्तोषी थे कि खेतों से बीन-बीन कर लाये गये अन्न कणों से ही अपना जीवन यापन करते थे। अतः उनका नाम कणाद पड़ा। वैशेषिक दर्शन

को 'औलूक्य दर्शन' भी कहा जाता है। इस दर्शन में 'विशेष' नामक पदार्थ की विशेषरूप से विवेचना की गई है इसलिये यह वैशेषिक दर्शन कहलाता है।

महर्षि कणाद ने **'वैशेषिक सूत्र'** की रचना की । 'वैशेषिक सूत्रों' पर प्रशस्तपाद ने **'पदार्थधर्मसंग्रह'** अथवा **'प्रशस्तपादभाष्य'** नामक भाष्य लिखा जो इस दर्शन का अत्यन्त महत्वपूर्ण ग्रन्थ है । 'प्रशस्तपादभाष्य' पर व्योमशिव ने **'व्योमवती'** टीका की रचना की । **'न्यायकन्दली'** 'प्रशस्तपादभाष्य' पर आचार्य श्रीधर की प्रसिद्ध टीका है । आचार्य उदयन ने भी 'प्रशस्तपादभाष्य' पर **'किरणावली'** टीका लिखी। श्रीवत्साचार्य ने 'प्रशस्तपादभाष्य' पर **'लीलावती'** नामक प्रसिद्ध टीका की रचना की । शंकरमिश्र ने 'वैशेषिकसूत्र' पर **'उपस्कारवृत्ति'** तथा 'प्रशस्तपादभाष्य' पर **'कणादरहस्य'** का प्रणयन किया है । शिवादित्य ने **'सप्तपदार्थी'** की रचना की । वरदराज ने **'तार्किकरक्षा'** तथा वल्लभाचार्य ने **'न्यायलीलावती'** का प्रणयन किया । अन्नम्भट्ट ने **'तर्कसंग्रह'** नामक प्रकरणग्रन्थ की रचना की जिसे वैशेषिक दर्शन का प्रवेशद्वार कहा जाता है । आचार्य विश्वनाथ पञ्चानन ने **'भाषापरिच्छेद'** नामक ग्रन्थ लिखा जिस पर उन्होंने स्वयं **'मुक्तावली'** नामक सुप्रसिद्ध टीका भी लिखी ।

11.5 वैशेषिक दर्शन की विषयवस्तु

कणाद वैशेषिक दर्शन के प्रवर्तक ग्रन्थ 'वैशेषिक सूत्र' के रचयिता हैं। कणाद ही इस दर्शन के जन्मदाता पिता हैं। शंकर मिश्र के अनुसार वैशेषिक सूत्रों की संख्या 370 हैं। सम्पूर्ण सूत्र दश अध्यायों में विभक्त है। प्रत्येक अध्याय में दो आह्निक हैं। प्रथम अध्याय के प्रथम आह्निक में द्रव्य, गुण तथा कर्म के लक्षण और विभाग का, दूसरे आह्निक में सामान्य का द्वितीय तथा तृतीय अध्यायों में नव द्रव्यों का, चतुर्थ अध्याय के प्रथम आह्निक में परमाणुवाद का, द्वितीय आह्निक में अनित्य द्रव्य विभाग का, पंचम अध्याय में कर्म का, षष्ठ अध्याय में वेद-प्रामाण्य का विचार प्रस्तुत कर धर्माधर्म का, सप्तम एवं अष्टम अध्याय में कतिपय गुणों का, नवम अध्याय में अभाव तथा अज्ञान का और दसवें अध्याय में सुख-दुःख के भेद तथा त्रिविध कारणों का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। न्याय-सूत्रों के साथ तुलना करने पर वैशेषिक-सूत्र प्राचीन सिद्ध होते हैं। विद्वानों ने 'वैशेषिक सूत्र' का रचना काल विक्रमपूर्व तृतीय शतक माना है।

वैशेषिक-दर्शन के अध्ययन से पता चलता है कि इस दर्शन में पदार्थों की मीमांसा हुई है। वैशेषिक-दर्शन में संसार की वस्तुओं के लिये पदार्थ शब्द का प्रयोग किया गया है। पदार्थ शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है- 'पदस्य अर्थः पदार्थः' अर्थ उसे कहा जाता है जिसे इन्द्रियाँ ग्रहण करती है- 'ऋच्छन्ति इन्द्रियाणि यं सोऽर्थः'। अतः पदार्थ का अर्थ अभिधेय वस्तु; नाम धारण करने वाली वस्तु है। प्रमिति अर्थात् ज्ञान का विषय होना भी पदार्थ का लक्षण है। अतः ज्ञान का विषय होने की योग्यता रखना (ज्ञेयत्व) तथा नाम की योग्यता रखना (अभिधेयत्व) पदार्थ का सामान्य लक्षण है। जिसका नामकरण किया जा सके वे सब 'पदार्थ' कहे जाते हैं। पदार्थ के अन्दर वैशेषिक ने विश्व की वास्तविक वस्तुओं की चर्चा की है। वैशेषिक दर्शन ने पदार्थों का वर्गीकरण दो भागों में किया है- 1.भाव पदार्थ तथा 2. अभाव पदार्थ। भाव पदार्थ संख्या में छः- द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष एवं समवाय तथा अभाव नामक पदार्थ के अन्तर्गत अभाव को रखा जाता है। वैशेषिक दर्शन दो प्रमाणों को स्वीकार करता है- प्रत्यक्ष एवं अनुमान। आइए अब हम इन पदार्थों के विषय में जानते हैं ।

11.5.1 द्रव्य

'समवायेन गुणवत्व क्रियावत्व वा द्रव्यत्वम्' अर्थात् द्रव्य वह पदार्थ है जो समवाय सम्बन्ध से गुण अथवा कर्म का आश्रय हो वह द्रव्य कहा जाता है। द्रव्य के नौ भेद हैं- **तत्रद्रव्याणि पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाश कालदिगात्ममनांसि नवैव** अर्थात् इन सात पदार्थों में पृथिवी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक् (दिशा), आत्मा तथा मन ये नौ ही द्रव्य हैं।

11.5.2 गुण

'द्रव्यकर्मभिन्नत्वे सति सामान्यत्वम्' अर्थात् द्रव्य और कर्म के अतिरिक्त जो सामान्यवान् है, जिसमें सामान्य रहता है उसे गुण कहते हैं। आचार्य अन्नम्भट्ट ने 24 प्रकार के गुण बताए हैं- 'रूप-रस-गन्ध-स्पर्श-संख्या-परिमाण-पृथक्त्व-संयोग-विभाग-परत्वापरत्व-गुरुत्व-द्रव्यत्व-स्नेह-शब्द-बुद्धि-सुख-दुःखेच्छा-द्वेष-प्रयत्न-धर्माधर्म संस्काराश्चतुर्विंशति गुणाः।'

11.5.3 कर्म

'संयोगभिन्नत्वे सति संयोगाऽसमवायिकारणत्वं कर्मत्वम्' अर्थात् संयोग से भिन्न होकर जो संयोग का असमवायिकारण है उसे कर्म कहते हैं। कर्म पाँच प्रकार के हैं- 'उत्क्षेपणापक्षेपणाऽऽकुंचनप्रसारणगमनानि पंचकर्माणि' अर्थात् उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुंचन, प्रसारण और गमन ये पाँच कर्म हैं।

11.5.4 सामान्य

'नित्यमेकमनेकानुगतं सामान्यम्' अर्थात् सामान्य नित्य, एक तथा अनेक में अनुगत अर्थात् समवाय सम्बन्ध से रहता है। सामान्य के दो भेद हैं- 'परमपरं चेति द्विविधं सामान्यम्' अर्थात् पर और अपर नामक दो सामान्य हैं। इसमें अधिक देश में रहने वाला 'पर सामान्य' कहलाता है और इसकी अपेक्षा कम देश में रहने वाला 'अपर सामान्य' है।

11.5.5 विशेष

'नित्यद्रव्यवृत्तयो व्यावर्तका विशेषाः' अर्थात् नित्य द्रव्यों में रहने वाले व्यावर्तक धर्म को 'विशेष' कहते हैं। नित्य द्रव्यों में रहने वाले विशेष अनन्त हैं। इसी विशेष नामक पदार्थ को मानने के कारण इसे वैशेषिक दर्शन कहा जाता है।

11.5.6 समवाय

'नित्यसम्बन्धत्वं समवाय लक्षणम्' अर्थात् नित्य सम्बन्ध को समवाय कहते हैं। 'समवायस्त्वेक एव' अर्थात् समवाय सम्बन्ध एक होता है। समवाय का प्रत्यक्ष नहीं होता। इसका ज्ञान अनुमान के द्वारा होता है।

11.5.7 अभाव

अभाव का लक्षण है - **'भावभिन्नत्वं या प्रतियोगिज्ञानाऽधीनज्ञानविषयत्वम् अभावत्वम्'** अर्थात् भाव से भिन्न को अथवा प्रतियोगी के ज्ञान के अधीन ज्ञान विषय को अभाव कहते हैं। अभाव चार प्रकार का माना गया है-प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अत्यन्ताभाव और

अन्योन्याभाव। वैशेषिक सूत्रों में द्रव्य आदि छः भाव पदार्थों का ही वर्णन मिलता है। अभाव की पदार्थ के रूप में गणना बाद के ग्रन्थकारों ने की है।

बोध/अभ्यास प्रश्न -

I. सत्य/असत्य का चयन कीजिए -

1. न्यायदर्शन में पदार्थों की संख्या 16 है। ( )
2. वैशेषिक दर्शन में पदार्थों की संख्या 10 है। ( )
3. न्यायदर्शन में प्रमेय 12 हैं। ( )

II. बहुविकल्पीय प्रश्न -

1. न्यायदर्शन में कितने प्रमाण माने गए हैं-
   (i) पाँच (ii) चार (iii) दो (iv) एक
2. वैशेषिक दर्शन में द्रव्य कितने हैं-
   (i) पाँच (ii) तीन (iii) दो (iv) नौ

III. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. वैशेषिक दर्शन में .....पदार्थ माने गये हैं। (दो/चार/सात/सोलह)
2. वैशेषिक दर्शन ..... प्रमाणों को मानता है। (दो/चार/सात)
3. वैशेषिक दर्शन के प्रवर्तक .....हैं। (गौतम/कणाद/नारद)

IV. अतिलघु उत्तरीय प्रश्न -

1. प्रमाण की परिभाषा क्या है?
2. न्यायदर्शन में पदार्थों के नाम बताइए ।
3. वैशेषिक दर्शन में पदार्थ कितने माने गए हैं ? उनका नाम सहित उल्लेख कीजिए।

V. अभ्यास प्रश्न -

1. वैशेषिक दर्शन में प्रतिपादित पदार्थों का वर्णन कीजिए।
2. न्यायदर्शन की विषयवस्तु को स्पष्ट कीजिए।

11.6 सारांश

न्याय और वैशेषिक दर्शनों के सिद्धांतो में इतना अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है कि दोनों को 'न्याय-वैशेषिक' इस संयुक्त नाम से ही प्रायः उदधृत किया जाता है। भारतीय दर्शन के इतिहास में इन दोनों दर्शनों को समानतन्त्र कहकर इनके सम्बन्ध को स्पष्ट किया जाता है। बौद्ध दार्शनिक तो कहीं-कहीं न्याय के सूत्रों को वैशेषिक नाम से भी उद्धृत कर बैठते हैं। वस्तुतः दोनों दर्शन एक दूसरे पर इस प्रकार निर्भर है कि उन्हें समानतन्त्र कहना प्रमाण संगत ही है। दोनों दर्शन परस्पर निर्भरता का ऐसा सम्बन्ध रखते हैं कि एक के अभाव में दूसरे की व्याख्या संभव नहीं प्रतीत होती। इस प्रकार **इकाई 11 'न्याय एवं वैशेषिक दर्शन का परिचय'** के अन्तर्गत हमनें न्याय दर्शन के इतिहास- प्राचीन न्याय एवं नव्यन्याय तथा उसकी विषयवस्तु- प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क,

निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रह-स्थान का तथा इसके अतिरिक्त वैशेषिक दर्शन के इतिहास एवं उसकी विषयवस्तु- द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय एवं अभाव का अध्ययन किया।

11.7 शब्दावली

जल्प	-	वाद-विवाद
कथा	-	कहानी
उत्क्षेपण	-	ऊपर की ओर फेंकना
अपक्षेपण	-	नीचे की ओर फेंकना
आकुञ्चन	-	समेटना
प्रमेय	-	यथार्थ ज्ञान का विषय

11.8 उपयोगी पुस्तकें

- तर्कभाषा, श्रीकेशवमिश्र प्रणीता, व्याख्याकार- श्री बदरीनाथ शुक्ल, मोतीलाल बनारसी दास, 2007
- भारतीय न्यायशास्त्र- एक अध्ययन, ब्रह्ममित्र अवस्थी, इन्दुप्रकाशन, दिल्ली, 1967
- वैशेषिक दर्शन में पदार्थ निरूपण, शशिप्रभा कुमार, प्रकाशन विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, 1992
- तर्कसंग्रह, अन्नम्भट्टप्रणीत, डॉ. पंकज कुमार मिश्र, परिमल पब्लिकेशन, 2001
- वैशेषिक दर्शन, बदरीनाथ सिंह, आद्याप्रकाशन, वाराणसी, 1979
- भारतीय दर्शन, डॉ. बलदेव उपाध्याय, शारदा मन्दिर, वाराणसी, 2011
- भारतीय दर्शन की रूपरेखा, एम. हिरियन्ना, मोतीलाल बनारसीदास, 2005
- भारतीय दर्शन की रूपरेखा, प्रो. हरेन्द्र प्रसाद सिन्हा, 2013
- भारतीय दर्शन शास्त्र- न्याय वैशेषिक, डॉ. धमेन्द्रनाथ शास्त्री, मोतीलाल बनारसी दास, 2006
- भारतीय दर्शन का इतिहास, डॉ. हरिदत्त शास्त्री, साहित्य भण्डार, मेरठ, 2003
- भारतीय दर्शन आलोचन और अनुशीलन, चन्द्रधर शर्मा, मोतीलाल बनारसी दास, 2013

11.9 बोध प्रश्न/उत्तर

I. सत्य/असत्य का चयन कीजिए -

1. सत्य 2. असत्य 3. सत्य

II. बहुविकल्पीय प्रश्न -

1. (ii) चार 2. (iv) नौ

III. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए -

1. सात 2. दो 3. कणाद

IV. अतिलघु उत्तरीय प्रश्न -

1. किसी पदार्थ के यथार्थ ज्ञान को प्राप्त करने का जो साधन है उसे प्रमाण कहते हैं।
2. प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति, निग्रह-स्थान।
3. सात पदार्थ माने गए हैं- द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव ।

V. अभ्यास प्रश्न -

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें ।